उच्च शिक्षा नीति निर्माण पर वैश्वीकरण का प्रभाव

डॉ. प्रकाश इन्दालिया – **सह आचार्य एंव विभागाध्यक्ष, लोकप्रशासन, माधव विश्वविधालय, पिण्डवाड़ा ,सिरोही (राज.)**
Email – dr.prakashindalia@gmail.com

सरांश :
शिक्षा से मानव का व्यक्तित्व संपूर्ण, विनम्र और संसार के लिए उपयोगी बनता है। सही शिक्षा से मानवीय गरिमा, स्वाभिमान और विश्व बंधुत्व में बढ़ोतरी होती है। अंततरू शिक्षा का उद्देश्य है–सत्य की खोज। प्राचीन काल में गुरुकुलों, आश्रमों तथा बौद्ध मठों में शिक्षा ग्रहण करने की व्यवस्था होती थी। तत्कालीन शिक्षा केन्द्रों में नालन्दा, तक्षशिला एवं वल्लभी की गणना की जाती है। मध्य काल में शिक्षा मदरसों में प्रदान की जाती थी। मुगल काल में प्राथमिक शिक्षा 'मकतव' में दी जाती थी और उच्च शिक्षा मदरसों में दी जाती थी। शिक्षा के यही दो रूप थे, प्राथमिक और उच्च अर्थात माध्यमिक शिक्षा नहीं थी। मुगल शासकों ने दिल्ली, अजमेर, लखनऊ एवं आगरा में मदरसों का निर्माण करवाया। भारत में आधुनिक व पाश्चात्य शिक्षा की शुरुआत ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन काल से हुई। भारत में शिक्षा का उत्तरदायित्व मूलतरू राज्य सरकारों पर है। केंद्रीय सरकार शिक्षा की सुविधाओं में तालमेल स्थापित करती है, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के माध्यम से उच्च शिक्षा का स्तर निश्चित करती है और अनुसंधान तथा वैज्ञानिक एवं प्राविधिकि शिक्षा की व्यवस्था करती है। शिक्षा की विकास योजनाओं का काम केंद्र तथा राज्य सरकारें मिलकर करती हैं।

शब्द कुंजी : शिक्षा प्रणाली, वैश्वीकरण, सरकारीकरण, स्ववित्तपोषित, बाजारीकरण

प्रस्तावना :

शिक्षा से मानव का व्यक्तित्व संपूर्ण, विनम्र और संसार के लिए उपयोगी बनता है। सही शिक्षा से मानवीय गरिमा, स्वाभिमान और विश्व बंधुत्व में बढ़ोतरी होती है। अंततरू शिक्षा का उद्देश्य है–सत्य की खोज। इस खोज का केंद्र अध्यापक होता है, जो अपने विद्यार्थियों को शिक्षा के माध्यम से जीवन में और व्यवहार में सच्चाई की शिक्षा देता है। छात्रों को जो भी कठिनाई होती है, जो भी जिज्ञासा होती है, जो वे जानता चाहते हैं, उन सबके लिए वे अध्यापक पर ही निर्भर रहते हैं। यदि शिक्षक के मार्गदर्शन में प्रत्येक व्यक्ति शिक्षा को उसके वास्तविक अर्थ में ग्रहण कर मानवीय गतिविधि के प्रत्येक क्षेत्र में उसका प्रसार करता है तो मौजूदा 21वीं सदी में दुनिया काफी सुंदर हो जाएगी। आज की युवा पीढ़ी ऐसी शिक्षा प्रणाली चाहती है जो उसके खोजी और सृजनशील मन को सबल बनाने के साथ–साथ उसके सामने चुनौती प्रस्तुत करे। देश का भविष्य उन पर टिका हुआ है। वे वर्तमान में शिक्षा प्रणाली के संबंध में सोच–विचार करना चाहते हैं। एक अच्छी शिक्षा प्रणाली में ऐसी क्षमता होनी चाहिए जो छात्रों की ज्ञान प्राप्ति की तीव्र जिज्ञासा को शांत कर सके। शैक्षणिक संस्थानों को ऐसे पाठ्यक्रम बनाने के लिए खुद को तैयार करना चाहिए जो विकसित भारत की सामाजिक और प्रौद्योगिकी संबंधी आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील हों। वर्तमान पाठ्यक्रम में विकास कार्यो की गतिविधियों को अनिवार्यतरू स्थान दिया जाना चाहिए ताकि ज्ञान समाज की भावी पीढ़ी पूरी तरह से सामाजिक परिवर्तन के सभी पहलुओं के अनुकूल हो सके।

भारत में शिक्षा का विकास :

क्रमवार विकास भारत में शिक्षा के प्रति रुझान प्राचीन काल से ही देखने को मिलती है। प्राचीन काल में गुरुकुलों, आश्रमों तथा बौद्ध मठों में शिक्षा ग्रहण करने की व्यवस्था होती थी। तत्कालीन शिक्षा केन्द्रों में नालन्दा, तक्षशिला एवं वल्लभी की गणना की जाती है। मध्य काल में शिक्षा मदरसों में प्रदान की जाती थी। मुगल काल में प्राथमिक शिक्षा 'मकतव' में दी जाती थी और उच्च शिक्षा मदरसों में दी जाती थी। शिक्षा के यही दो रूप थे, प्राथमिक और उच्च अर्थात माध्यमिक शिक्षा नहीं थी। मुगल शासकों ने दिल्ली, अजमेर, लखनऊ एवं आगरा में मदरसों का निर्माण करवाया। भारत में आधुनिक व पाश्चात्य शिक्षा की शुरुआत ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी के शासन काल से हुई।

1813 ई. के चार्टर –1813 ई. के चार्टर में सर्वप्रथम भारतीय शिक्षा के प्रचार–प्रसार के लिए एक लाख रुपये की व्यवस्था की गई। लोक शिक्षा के लिए स्थापित सामान्य समिति के दस सदस्यों में दो दल बन गये थे। एक आंग्ल या पाश्चात्य विद्या का समर्थक था तो दूसरा प्राच्य विद्या का। प्राच्य विद्या के समर्थकों का नेतृत्व लोक शिक्षा समिति के सचिव एच.टी. प्रिंसेप ने किया जबकि

इनका समर्थन समिति के मंत्री एच.एच. विल्सन ने किया। 'अधोमुखी निस्यंदन सिद्धान्त', जिसका अर्थ था– शिक्षा समाज के उच्च वर्ग को दी जाये, को सर्वप्रथम सरकारी नीति के रूप में आकलैण्ड ने लागू किया। 'वुड डिस्पैच' के पहले तक इस सिद्धान्त के तहत भारतीयों को शिक्षित किया गया।

वुड का डिस्पैच –बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के प्रधान चार्ल्स वुड ने 19 जुलाई, 1854 को भारतीय शिक्षा पर एक व्यापक योजना प्रस्तुत की जिसे 'वुड का डिस्पैच' कहा जाता है।

हन्टर आयोग –वुड के घोषणा पत्र द्वारा शिक्षा के क्षेत्र में हुई प्रगति की समीक्षा हेतु 1882 ई. में सरकार ने डब्ल्यू. हंटर की अध्यक्षता में हन्टर आयोग की नियुक्ति की। इस आयोग में 8 सदस्य भारतीय थे। आयोग को प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा की समीक्षा तक ही सीमित कर दिया गया था।

सैडलर आयोग –1917 ई. में कलकत्ता विश्वविद्यालय की समस्याओं के अध्ययन के लिए डॉ. एम.ई. सैडलर के नेतृत्व में 'सैडलर आयोग' गठित किया गया।

हार्टोग समिति –1929 ई. में भारतीय परिनीति आयोग ने सर फिलिप हार्टोग के नेतृत्व में शिक्षा के विकास पर रिपोर्ट हेतु एक सहायक समिति का गठन किया। समिति ने प्राथमिक शिक्षा के महत्त्व की बात की। हार्टोग समिति की सिफारिश के आधार पर 1935 में 'केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार बोर्ड' का पुनर्गठन किया गया।

वर्धा योजना –वर्धा योजना को कई नामों से जाना जाता है यथा– बुनियादी शिक्षा, बेसिक शिक्षा आदि। गांधीजी द्वारा 1937 ई. में वर्धा नामक स्थान पर इस योजना का सूत्रपात हुआ। इसमें शिक्षा के माध्यम से हस्त उत्पादन कार्यों को महत्त्व दिया गया। इसमें बालक अपनी मातृभाषा के द्वारा 7 वर्ष तक अध्ययन करता था।

सार्जेण्ट योजना –1944 ई. में केन्द्रीय शिक्षा सलाहकार मण्डल ने 'सार्जेण्ट योजना' (सार्जेण्ट भारत सरकार में शिक्षा सलाहकार थे) के नाम से एक राष्ट्रीय शिक्षा योजना प्रस्तुत की। इसमें 6 से 11 वर्ष के बच्चों के लिए नि:शुल्क अनिवार्य शिक्षा दिये जाने की व्यवस्था की गई थी।

राधाकृष्णन आयोग –डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन की अध्यक्षता में सन् 1948–1949 में उच्च शिक्षा के सुझाव के लिए 'राधाकृष्णन आयोग' का गठन किया गया। 1953 ई. में राधाकृष्णन आयोग की सिफारिशों को क्रियान्वित करने के लिए विश्वविद्यालय अनुदान अयोग की स्थापना की गयी।

मुदालियर आयोग – मुदालियर आयोग या माध्यमिक शिक्षा आयोग का गठन सन् 1952–1953 में हुआ। इसने माध्यमिक शिक्षा के लिए सुझाव दिए। डॉ. डी.एस. कोठारी की अध्यक्षता में जुलाई 1964 ई. में कोठारी आयोग की नियुक्ति की गई। इसने प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा और उच्च अर्थात विश्वविद्यालय शिक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण संस्तुतियाँ या सुझाव दिये।

अंग्रेजों के शासन में भारत की सारी व्यवस्थाएं धीरे–धीरे समाप्त कर दी गई। इस कारण से देश की आर्थिक स्थिति भी बहुत खराब हो गई। कुछ वर्षो के बाद संस्कृत के पाठषालाओं को अनुदान बंद कर दिया गया और अंग्रेजी विद्यालयों को अधिक–2 अनुदान दिया जाने लगा। छात्रों से शुल्क लेना, शिक्षकों का वेतन एवं विद्यालय चलाने हेतु अनुदान सरकार के द्वारा दिया जाने लगा। एक प्रकार से शिक्षा का सरकारीकरण शुरू हो गया।

इसके परिणामस्वरूप 1820 में 33 प्रतिशत साक्षरता थी वह 1921 में 7.2 प्रतिशत रह गई। 20 अक्टूबर 1931 को लन्दन के रॉयल इन्स्टीटयूट आफ इन्टरनेशनल अफेर्स में गांधी जी ने अपने भाषण में कहा कि पिछले 50–100 वर्षो में भारत की सारक्षरता का प्रमाण काफी नीचे गया है। उसके लिये अंग्रेज जिम्मेदार है। उस समय स्वतंत्रता के आन्दोलन के साथ–2 ''राष्ट्रीय शिक्षा'' का भी आन्दोलन चला। स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द सरस्वती, महर्षि अरविन्द्र, महात्मा गांधी, महामना मालवीय जी आदि का इसमें महत्त्वपूर्ण योगदान रहा। इसके परिणामस्वरूप 1947 में साक्षरता दर 17 प्रतिशत हो गई। स्वतंत्रता के पूर्व में इस प्रकार के प्रयासों में समर्पित भाव से आर्यसमाज, सनातन धर्म सभा, भारतीय विद्या भवन आदि संस्थाओं के द्वारा बड़ी मात्रा में शैक्षिक संस्थाएं शुरू हुई। जिसका लक्ष्य पैसा प्राप्त करना कतई नहीं था। स्वतंत्रता के बाद भी इस भाव से कुछ शैक्षिक संस्थाए कार्यरत है।

स्वतंत्रता के बाद शिक्षा :–

समग्र शिक्षा व्यवस्था का सरकारीकरण हुआ। शैक्षिक संस्थाए या तो सीधे तोर पर सरकार चलाती थी या सरकार के अनुदान से संस्थाएं चलती थी। विद्यार्थियों का निश्चित शुल्क शिक्षकों का निष्चित वेतन एवं संस्था चलाने हेतु अनुदान जैसी व्यवस्थाए बनी। कुछ समय के बाद सरकारी शैक्षिक संस्थाओं के स्तर में लगातार गिरावट आती गई। इस कारण से निजी विद्यालयों का आकर्षण बढ़ा शुरू में अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों में वस्तुओं के रूप में दान लेना शुरू हुआ। आगे जाकर छात्र से बड़ी मात्रा में दान लेना, शिक्षकों की नियुक्ति में पैसा लेना और कम वेतन देना शुरू हुआ। विद्यालयों में शिक्षा के स्तर गिरने से ट्यूशन प्रथा प्रारम्भ हुई। क्रमशः शिक्षा का स्वरूप धन्धे जैसा बनने लगा।

1960 के दशक में दक्षिण भारत में व्यवसायी उच्च शिक्षा के संस्थान बिना सरकारी अनुदान से खुले जिसमें छात्रों के पास बड़ी मात्रा में शुल्क लिया जाने लगा। जिसको उस समय केपीटेषन फ्री कहा गया। एक प्रकार से अमीरों के बालकों हेतु शैक्षिक संस्थान। इसके विरूद्ध उन्नीकृष्णन नाम के व्यक्ति ने न्यायालय में याचिका दायर की। इसके सन्दर्भ में निर्णय देते हुए न्यायालय ने 50 प्रतिशत सीटस पर अधिक शुल्क एवं 50 प्रतिशत सीटस पर मेरीट के आधार पर सामान्य शुल्क से प्रवेश की व्यवस्था दी।

वैश्वीकरण :–

1990 के बाद दुनिया में वैश्वीकरण की हवा चली जिसको एल.पी.जी.(लीबरेलाइजेशन, प्राइवेटाईजेशन, ग्लोबलाईजेशन) भी कहा गया जिसका शिक्षा पर भी प्रभाव हुआ। सरकारें उच्च शिक्षा में अपना हाथ खीचनें लगी। शुरू में व्यावसायिक महाविद्यालय सरकार के द्वारा खुलना बंद हो गया जिसके परिणामस्वरूप स्ववित्तपोषित शैक्षिक संस्थान खुलने लगे। इसके कई प्रकार के स्वरूप बनने लगे डीम्ड विश्विद्यालय, स्वायत्त (आटोनोमस) महाविद्यालय, निजी विश्विद्यालय आदि। यह सब नाम अलग–2 थे लेकिन उनका सबका स्ववित्तप्रोषित संस्थान का स्वरूप था। जिस पर सरकार का किसी भी प्रकार का नियंत्रण नहीं था। डीम्ड विश्विद्यालय की संकल्पना बदल दी गई। शिक्षा का व्यवसायीकरण या बाजारीकरण आज देश के समक्ष बड़ी चुनौती हैं। यह संकट देश में विगत 40–45 वर्षो में उभरकर आया है। परन्तु वास्तव में उसकी नींव अंग्रेज मैकॉले द्वारा स्थापित शिक्षा में है। किसी भी समस्या का समाधान चाहते है तो उसकी जड़ में जाने की आवश्यकता होती है। शिक्षा में वर्तमान का व्यवसायीकरण का कारण क्या है? उसका समाधान क्या हो? कुछ लोग ऐसा भी तर्क देते है कि शिक्षा का विस्तार करना है या सर्वसुलभ कराना है तो मात्र सरकार के द्वारा संभव नहीं है, निजीकरण आवश्यक है और जो व्यक्ति शिक्षा संस्थान में पैसा लगायेगा वह बिना मुनाफे क्यों विद्यालय,महाविद्यालय खोलेगा? कुछ लोग इससे भी आगे बढ़कर कहते है कि देश की शिक्षा का विस्तार एवं विकास करने हेतु विदेशी शैक्षिक संस्थाओं के लिए द्वारा खोलने चाहिए। वैश्वीकरण के युग में इसको रोका नहीं जा सकता आदि ।

अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थान :–

संविधान की धारा 29, 30 के तहत अल्पसंख्यक समुदाय को अपने शैक्षिक संस्थान स्थापित करने का अधिकार दिया गया है। लेकिन इस धारा का इस प्रकार से दुरूपयोग शुरू हुआ कि उनको किसी प्रकार का कानून लागू नहीं हो सकता। इसका दुरूपयोग इतने आगे बढ़ा कि जिस संस्थान में अल्पसंख्यक छात्रों की संख्या बहुत कम है, शिक्षकों की भी यही स्थिति है, प्रबंधन में भी अधिक अन्य लोग है ऐसे संस्थानों को अल्पसंख्यक दर्जा प्राप्त होने लगा। इस सन्दर्भ में कोई भी सरकार या न्यायालय भी कुछ करने के लिये तैयार नहीं है। इसके विरूद्ध देश के विभिन्न न्यायालयों में याचिकाएं दायर की गई। इन सभी याचिकाओं की उच्चतम न्यायालय में सामूहिक रूप से सुनवाई शुरू की जिसका निर्णय 30 अक्टूबर 2010 टी.एम.ए.पाई फाउण्डेशन विरूद्ध स्टेट आफ कर्णाटका एवं अर्दस के नाम से दिया गया जिसमें अल्पसंख्यक संस्थाओं के सन्दर्भ में कुछ न कहते हुए स्ववित्तपोषित शैक्षिक संस्थानों में 50 प्रतिशत पेमेन्ट सीटस एवं 50 प्रतिशत फ्री सीटस की संकल्पना खारिज की गई। एक के लिये दूसरा शुल्क वहन करे यह कुदरती न्याय के विरूद्ध है इस प्रकार के तर्के दिये गये। उच्चतम न्यायालय ने इस हेतु एक नई व्यवस्था बनायी जिसमें जब तर्क केन्द्र या राज्य सरकार कोई कानून नहीं बनाते तब तक प्रत्येक राज्य में शुल्क एवं प्रवेश हेतु राज्य स्तर पर दो समिति बनायी जाए और उसके द्वारा स्ववित्तपोषित शैक्षिक संस्थानों की व्यवस्था चले। विभिन्न राज्यों में स्ववित्त प्रोषित शैक्षिक संस्थानों में मनमाने तरीके से शुल्क लिया जा रहा है। विदेशी विश्विद्यालय भी इस कड़ी का एक अगला कदम है। विदेशी विश्विद्यालय हमारे देश की शिक्षा का उद्वार करेंगे यह कैसी सोच है? और विदेशी विश्विद्यालय हेतु हम लाल कालीन बिछाने जा रहे है। देश के

सरकारी, निजी, स्ववितपोषित सारे संस्थानों में आरक्षण लागू है लेकिन विदेशी विश्वविद्यालयों में यह लागु नहीं होगा। इस प्रकार के संस्थानों में हमारे देश की आवश्यकता के अनुसार पाठ्यक्रम कैसे होगा? विदेशी संस्थानों में उनके देश की आवश्यकता के अनुसार पाठ्यक्रम होगा। उन संस्थानों में शुल्क संरचना भी अधिक होगी। ऐसे संस्थान बड़े– बड़े शहरों में ही खुलेगें और उसमें अपने सांस्कृति मूल्यों की कल्पना ही नहीं की जा

वर्तमान शिक्षा नीति का परिणाम :–

आज उच्च–शिक्षा क्षेत्र में अराजकता का माहौल है। शुल्क न भर सकने के कारण छात्र आत्महत्याएं कर रहे है। अभिभावक इस हेतु गलत कार्य करने को मजबूर है। एक प्रकार से व्यवसायिक उच्च–शिक्षा उच्च मध्यम वर्ग या उच्च वर्ग को छोड़कर अन्य किसी भी वर्ग के बस की बात नही रही। प्रश्न उठता है इस प्रकार के लगभग 20 प्रतिशत वर्ग को छोड़कर 80 प्रतिशत वर्ग के बच्चे प्रतिभाव नहीं है क्या? इससे देश की प्रतिभाएं भी कुठित हो रही है। इन सारी परिस्थितियों के कारण वर्तमान में शिक्षा का मात्र बजारीकरण नहीं हुआ है। एक प्रकार से अतिभ्रष्ट व्यापार हो गया है। इस प्रकार की शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्र किस प्रकार के निर्माण होगे? और इस प्रकार के छात्र देश के विभिन्न क्षेत्रों का नेतृत्व करेंगे तब देश का चरित्र कैसा बनेगा? यह बड़ा प्रष्न है। देश में भ्रष्टाचार, अनाचार, चरित्र–हीनता बढ़ रही है उसकी चिंता करने से कुछ परिणाम नहीं होगा। जब तक शिक्षा का बाजारीकरण नहीं रूकेगा तब तक बाकी सारी गलत बातें बढ़ना स्वाभाविक है। देश की सभी समस्याओं की जड़ वर्तमान शिक्षा है।

भारत में शिक्षा का उत्तरदायित्व मूलत: राज्य सरकारों पर है। केंद्रीय सरकार शिक्षा की सुविधाओं में तालमेल स्थापित करती है, विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के माध्यम से उच्च शिक्षा का स्तर निश्चित करती है और अनुसंधान तथा वैज्ञानिक एवं प्राविधिकि शिक्षा की व्यवस्था करती है। शिक्षा की विकास योजनाओं का काम केंद्र तथा राज्य सरकारें मिलकर करती हैं। पिछले 10 वर्षो में शिक्षा के क्षेत्र में बहुत प्रगति हुई थी। सन् 2006–07 में उच्च शिक्षण संस्थानों में पंजीयन की संख्या 165 लाख थी, जो 2011–12 में बढ़कर 259.8 लाख हो गई। उच्च शिक्षा की प्रगति का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना सन् 2007–12 में उच्च शिक्षा में वृद्वि दर 9.5 हो गई।

निष्कर्ष:

1990 के बाद दुनिया में वैश्वीकरण की हवा चली जिसको एल.पी.जी.(लीबरेलाइजेशन, प्राइवेटाईजेशन, ग्लोबलाईजेशन) भी कहा गया जिसका शिक्षा पर भी प्रभाव हुआ। सरकारें उच्च शिक्षा में अपना हाथ खीचनें लगी। शुरू में व्यवसायिक महाविद्यालय सरकार के द्वारा खुलना बंद हो गया जिसके परिणामस्वरूप स्ववित्तप्रोषित शैक्षिक संस्थान खुलने लगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986 की तीन बार समीक्षा करने के लिए जो समितियां गठित हुईं उनकी भी अधिकांश संस्तुतियों का क्रियान्वयन न किये जाने से वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी केन्द्र और राज्य सरकारें शिक्षा के सम्बन्ध में कोई नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू करने की सोच नहीं रखतीं जो भारत के विकास में एक बाधा स्वरूप सोच कही जा सकती है और शिक्षा के निरन्तर मुक्तिकरण, निजीकरण और भूमण्डलीयकरण के प्रगतिशील विचारों के विपरीत है जो निरन्तर व्यवसायीकरण को बढ़ावा दे रहा है अगर यह सिलसिला निरन्तर चलता रहा तो निश्चित ही शिक्षा के स्वरूप के रथ का पहिया विकासीकरण की ओर न जाकर विनाशीकरण की ओर जायेगा।इस शोध के द्वारा यदि सरकार या तो तीनों समीक्षा समितियों की संस्तुतियों का क्रियान्वयन करे या फिर कोई नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति घोषित करे तो शिक्षा का स्वरूप निश्चित ही राष्ट्र का स्वांगीण विकास करने वाला होगा।

सूचना प्रौद्योगिकी में प्रगति से दुनिया सिमट गई है। दुनिया की वास्तविक जटिल समस्याओं के निदान के लिए दुनिया के वैज्ञानिकों के बीच तालमेल होना अनिवार्य है। प्राचीन काल में भारत को शिक्षा, वैज्ञानिक अनुसंधान और दर्शन का गढ़ माना जाता था, किंतु कुछ दशकों से भारत के वैज्ञानिकों का रुख पूर्व से पश्चिम की ओर हो गया है। देर से ही सही, पश्चिमी देशों के वैज्ञानिक फिर भारत की ओर आकृष्ट होने लगे हैं। हमें भारत को विज्ञान और अनुसंधान के क्षेत्र में श्रेष्ठता का केंद्र बनाने के लिए और श्रम करना होगा। भारत 2020 तक अपने–आपको एक विकसित राष्ट्र बनाने के मिशन में जुटा हुआ है। जिस संसाधन के बल पर यह मकसद हासिल होगा वे हैं पच्चीस वर्ष से कम उम्र के देश के देश के 54 करोड़ नौजवान।

बच्चे और युवक किसी देश के भविष्य की तस्वीर होते हैं। हमारे समाज का एक महत्वपूर्ण, सशक्त और संसाधनों से भरा हुआ वर्ग युवकों का है जिनमें आसमान की बुलंदियों का छू लेने की आकांक्षा धधक रही है। यदि उनकी ऊर्जा को सही दिशा दी जाए तो उससे ऐसी गतिशीलता पैदा होगी जो राष्ट्र को विकास के तेज वाहन में दौड़ा देगी। युवकों को अपनी योजना और विकास प्रक्रिया का केंद्र बिंदु मानते हुए हमें इस बहुमूल्य मानव संसाधन की देखरेख करने की आवश्यकता है। चाहे कितनी भी गति और स्मृति वाले कंप्यूटर बन जाएं, मानव चिंतन का स्थान हमेशा सबसे ऊपर रहेगा। सृजनशीलता जैसा गुण इंसान में सदा मौजूद रहेगा और प्रौद्योगिकी से प्राप्त होने वाली गणना क्षमता जैसा मजबूत हथियार इंसान के पास होगा। उसका उपयोग वह इस दुनिया को और खूबसूरत बनाने की अपनी योजना को साकार करने में करेगा।

केन्द्र में मौजूदा सरकार उच्च शिक्षा के क्षेत्र में सुधार के प्रयास कर रही है परन्तु वर्तमान में किसी भी भारतीय विश्वविद्यालय को संसार के 200 सर्वोच्च विश्वविद्यालय में स्थान प्राप्त नहीं है। यहां तक कि देश के सर्वोच्च शैक्षिक संस्थाओं में शुमार नई दिल्ली के जवाहरलाल नेहरू विश्वविधालय, दिल्ली विश्वविधालय एंव जामिया मिलिया इस्लामिया विश्वविधालय भी इसमें अपना कोई स्थान नहीं रखते । देश की आजादी के बाद की दो बडी शिक्षा नीतियों (1968 एंव 1986) लागू करने के बाद भी हालात चितांजनक है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में वर्तमान में भारत में करीबन 712 विश्वविधालय, आई.आई.टी.,तथा एन.आई.टी. तथा 36671 महाविधालय हैं जो दुनिया भर में सर्वाधिक है। विषम तथ्य यह है कि उच्च शिक्षा संस्थानों में सकल नामाकंन की दर लगातार कम होती जा रही है। जो कि वर्तमान में लगभग 15 प्रतिशत है।यह दर वैश्विक सकल नामाकंन में 24 प्रतिशत, विकासशील देशों में (15 प्रतिशत) एंव विकसित देशों में (58 प्रतिशत) के मुकाबले बहुत कम है। संयुक्त राज्य अमेरीका का सकल नामाकंन अनुपात 84 प्रतिशत है जबकि चीन का 23 प्रतिशत है। ये आंकडे बतातें हैं कि उच्च शिक्षा के नीति को समग्ररूप से सुधारे जाने की आवश्यकता हैं

सन्दर्भ :

1. उच्च शिक्षा में नवीन शोध प्रवृतियां, डॉ. प्रकाश इन्दालिया
2. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986,मानव संसाधन विकास मंत्रालय,भारत सरकार
3. बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012–2017), सामाजिक क्षेत्र वोल्युम – III
4. http://aajkishiksha.blogspot.in
5. http://en.bharatdiscovery.org/india/
6. http://pearson.vrvbookshop.com
7. http://shodhganga.inflibnet.ac.in
8. http://www.bharatiyashiksha.com